शोध संचयन
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
Vol. 13
Issue 1&2
15 July 2022

परम्परा और आधुनिकता से वाद-संवाद करती आज की स्त्री उषा- प्रियंवदा

बीज शब्द :

परम्परा, आधुनिकता, स्त्री जीवन, ऊब, घुटन, परिवारिक टूटन, परिवर्तन की प्रक्रिया

उषा प्रियंवदा नई कहानी आन्दोलन के उस दौर की रचनाकारों में से हैं जिन्होंने मध्यवर्गीय स्त्री जीवन में आने वाली रूढ़िवादी मान्यताओं के साथ-साथ समाज में स्त्री-पुरुष के बनते-बिगड़ते सम्बन्धों और स्त्री के अंर्तद्वाद्वों को बहुत ही सहज और धर्य के साथ अपनी कहानियों में परत-दर-परत खोलने का काम किया है। उषा प्रियंवदा स्त्री अंर्तमन में प्रवेश कर उसके रहस्य लोक को उजागर करने वाली कहानीकार हैं। इनकी कहानियों के स्त्री पात्र परम्परा से विद्रोह तो करती हैं लेकिन परम्परा में निहित अच्छाईयों का वरण भी करती है। आधु-निकता-परम्परा से वाद-संवाद करती हुई आधुनिक जीवन पद्धति को स्वीकार कर सामाजिक समस्याओं-ऊब, घुटन, अकेलापन जैसी आधुनिक बीमारियों के साथ, प्रेम-विवाह, विवाहेतर सम्बन्ध, बेमेल-वैवाहिक सम्बन्ध जैसे अनेक परिवर्तन की स्थिति पर विचार करती हैं।

*****

मंजू कुमारी
शोधार्थी
पता- रूम. न. 245, गोदावरी हॉस्टल
जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय
नई दिल्ली-110067

परम्परा और आधुनिकता से वाद-संवाद करती आज की स्त्री उषा-प्रियंवदा

प्राचीन काल से मध्यकाल तक समाज की लगभग हर गतिविधियों का संचालन बिना किसी तर्क के 'धर्म और आस्था' के आधार पर संचालित हो रहा था। लेकिन आधुनिक काल में आकर यह विचारधारा खण्डित हुई है। मध्यकाल तक जहाँ 'धर्म और आस्था' का बोलबाला था, उसकी जगह अब मनुष्य और उसके 'तार्किक विचारों' ने ले लिया है। 'मनुष्य' के केंद्र में आते ही समाज के बने बनाए मूल्य टूटने लगे हैं। मनुष्य नियतिवादी विचारधारा से निकलकर कर्मवाद और तार्किकता में विश्वास करने लगा। 'मध्ययुग' शब्द के अर्थ को स्पष्ट करते हुए द्विवेदी जी लिखते हैं- यह (मध्यकाल) 'पतनोंमुख और जबदी हुई मनोवृति है।'[1] आधुनिक मनुष्य प्राचीन ग्रन्थों में व्याप्त असीम ज्ञानराशि के भण्डार को अंधभ की तरह सहज ढंग से स्वीकार न करते हुए, प्रत्येक प्राचीन ग्रन्थों और चली आ रही रूढ़िवादी विचार धाराओं से तर्क करता हुआ नजर आ रहा है। इतना ही नहीं समाज में आज तक जिन धार्मिक ग्रंथों को पवित्र मानकर 'आस्था' के नाम पर पूजा जाता रहा है, आज का मनुष्य उन पर भी अपने तर्कशील विचारों के आधार पर सवाल उठा रहा है। मनुष्य के केंद्र में आते ही चली आ रही रूढ़िवादी विचारधारा और धार्मिक मान्यताएं खण्डित हुई हैं, क्योंकि मनुष्य ने तार्किकता के आधार पर उनका खण्डन करना शुरू कर दिया है। समाज में जो कुछ सिल-सिलेवार तरीके से पीढ़ी दर पीढ़ी बहुत समय से निरंतर गतिशील और परिवर्तनशील होता हुआ चला आ रहा है, वही परंपरा है।

परंपरा निरंतर गतिमान होने के कारण आज भी चल रही है। परम्परा समाज में व्याप्त अन्य विचारधाराओं और परम्पराओं को आत्मसात करती हुई विकसित होती रहती है। समाज में कोई एक परम्परा नहीं होती है बल्कि बहुत सी परम्पराएं होती हैं। 'पर किसी भी राष्ट्र की मूल परंपरा एक होती है उसे मुख्य धारा कहा जा सकता है।''[2] इस प्रकार मुख्य धारा में गतिमान होने वाली परंपरा समाज में व्याप्त अन्य देशज परम्पराओं से भी उचित सामग्री को ग्रहण कर विकसित होती रहती है।

औपनिवेशिक दौर में जब भारत में बहुत से विदेशियों का आगमन हुआ तो उनके साथ-साथ उनके धर्म और संस्कृति का हमारे भारतीय धर्म और संस्कृति पर प्रभाव पड़ना स्वभाविक था। इस प्रकार तमाम तरह की परम्पराओं को आत्मसात करती हुई भारत की मूल परम्परा का विकास हुआ और वह विकसित होती हुई आगे बढ़ी। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने परंपरा पर गंभीरता से विचार किया है। परंपरा के सम्बन्ध में उन्होंने लिखा है कि- 'एक का दूसरे को, दूसरे का तीसरे को दिया जाने वाला क्रम ही परंपरा है। वह अतीत का समानार्थक शब्द नहीं है।'[3] आगे कहते हैं- 'परंपरा से हमें समूचा अतीत प्राप्त नहीं होता बल्कि उसका निरंतर निखरता, छंटता, बदलता हुआ रूप प्राप्त होता है।'[4] हमें या समाज को अपनी परंपरा से जो कुछ मिलता है उस पर खड़े होकर हम आगे बढ़ने की कोशिश करते हैं। परम्परा हमारे लिए इसलिए भी उपयोगी हो जाती है और भविष्य में रहेगी भी, क्योंकि कोई भी विचारधारा आसमान में पैदा नहीं होती है। उसी प्रकार आधुनिक विचारधारा का आधार भी परंपरा है और उसकी जड़े बहुत गहराई तक गई हुई हैं। इसी क्रम में द्विवेदी जी इतिहास, परंपरा और संप्रदाय में विभेद की भी व्याख्या करते हैं' 'संप्रदाय' उसे कहा जाता है- जब प्रयत्नपूर्वक किसी आचार या विचार को पीढ़ियों तक सुरक्षित रखने का प्रयत्न होता है। 'संप्रदाय स्थिति का संरक्षक है।'[5] इसलिए वह परंपरा के विरुद्ध है। और इस प्रकार वह इतिहास के साथ आधुनिकता के भी विरुद्ध है।

जब हम आधुनिकता की बात करते हैं तो हमारे सामने यह प्रश्न स्वतरू उठता है कि आधुनिक युग क्या है? यह भारत में कब और कैसे आया? भारतीय परिपेक्ष्य में इसे कैसे समझ सकते हैं? आदि-आदि। आधुनिक युग विज्ञान की देन है। मशीनों के आने के बाद ही इस युग में नयी समस्याएँ और उनको समझने के लिए नये प्रयत्न सामने आने लगे। राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्तर पर मनुष्य परिवर्तित होने को बाध्य हुआ और तेजी से उस युग का जन्म हुआ जिसे हम 'आधुनिक' कहते हैं। पश्चिम के देशों से हमारा संपर्क होने के बाद हम इस युग में प्रविष्ट हुए।'[6] लेकिन भारतीय आधुनिकता को हम पाश्चात्य आधुनिकता की देन या नकल नहीं कह सकते हैं। यूरोपीय आधुनिकता का संघर्ष सीधे मध्ययुगीन मान्यताओं और मूल्यों से था और अमरीकी आधुनिकता का सीधे ब्रिटिश साम्राज्यवाद से। लेकिन भारतीय आधुनिकता को एक साथ अनेक स्तरों और दिशाओं में संघर्ष करना पड़ा। यह संघर्ष जहाँ एक ओर ब्रिटिश साम्राज्यवाद के आर्थिक' राजनीतिक मोर्चे पर था, वहीं दूसरी ओर धार्मिक और सांस्कृतिक मोर्चे पर भी और इन सबके बीच शामिल था भारतीय कमजोर पूजीपति वर्ग, संकटग्रस्त सामंत वर्ग और उनके मूल्य, नई शिक्षा और पश्चिम की कशमकश।[7] मध्यकाल में जहाँ मनुष्य 'धर्म और आस्था' के आधार पर समाज की सारी गतिविधियों में भाग लेता था, 'धर्म और संस्कृति' के विपरीत जाना पाप समझा जाता था, आधुनिक युग में उन सबको नकारते हुए 'मनुष्य' केंद्र में आया। उसने अपने स्वतंत्र अनुभव और तार्तिकता के आध ार पर चली आ रही पुरानी विचारधारा का खण्डन करते हुए, तार्किक विचारधारा और 'स्वयं' को महत्व देना शुरू कर दिया।'

आधुनिकता अपने आपमें कोई मूल्य नहीं है। मनुष्य ने अनुभवों द्वारा जिन महनीय मूल्यों को उपलब्ध किया है, उन्हें नये सन्दर्भों में देखने की दृष्टि आधुनिकता है।'[8] इस प्रकार यह कह सकते हैं कि किसी वस्तु या विचारधारा का 'परंपरा से सम्बन्ध का महत्व तभी है जब उसमें एक दृष्टि हो।'[9] साहित्य के सम्बन्ध में रचे हुए का विनष्ट होना और विनाश की पुर्नरचना ही आधुनिकता की मांग है। नामवर सिंह ने लिखा है कि 'आधुनिक युग की वैज्ञानिक प्रगति द्विवेदी जी के लिए एक सूचना मात्र नहीं, बल्कि भावबोध को निर्मित करने वाली सच्चाई है। इसीलिए आधुनिकता भी उनके लिए एक नया फैशन नहीं बल्कि भावबोध के स्तर की वस्तु है।'[10]

परंपरा और आधुनिकता दोनों एक दूसरे से अलग नहीं बल्कि एक दूसरे के पूरक हैं। इसलिए इन दोनों को अलग करके नहीं समझा जा सकता है, क्योंकि जो मूल्य आज हमारी दृष्टि में प्राचीन हैं वही उस समय में आधुनिक रहे होंगे। आधुनिकता किसी समाज में अपने आप जन्म नहीं लेती वरन उसका मूल स्वरूप परंपरा या यूं कहे कि पहले से समाज में मौजूद रीति-रिवाज, संस्कार आदि से जुड़ा होता है। परंपरा कोई 'स्थैतिक' चीज नहीं है। यह स्वयं में विकासशील और परिवर्तनशील होती रहती है। अगर परंपरा स्वाभाविक रूप से विकसित होती रहे तो वह निरंतर अपना आधुनिकीकरण करती रहती है।

इस प्रकार देखा जाय तो परंपरा और आधुनिकता के बीच टकराव होना तो नहीं चाहिए लेकिन ऐसा होता नहीं है। क्योंकि कोई भी समाज इतने सहज और सरल ढंग से आगे नहीं बढ़ता है। सामाजिक विकास की प्रक्रिया वास्तव में द्वंद्वात्मक होती है। जब पुराने मूल्यों पर नये मूल्य हावी होते हैं तो हलचल होना स्वाभाविक है। समाज में हर काल में कुछ तबकों के अपने कुछ निजी स्वार्थ रहे हैं, जो समाज की चीजें अपने अनुकूल न होने पर समाज की दिशा अवरुद्ध करने की पूरी कोशिश करते हैं। जिस कारण परंपरा का विकासशील रूप अवरुद्ध हो जाता है। आधुनिकता का संघर्ष ऐसे ही परंपरा से है।

वर्तमान समय में हमारे भारतीय समाज के भीतर परंपरा और आधुनिकता की शक्तियाँ टकरा रही हैं। जिसका प्रभाव साहित्य में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। साहित्य के क्षेत्र में (विशेषकर वह कविता हो या उपन्यास, कहानी) नयी कहानी के दौर में नये कहानीकार परम्परा और आधुनिकता की टकराहट को बहुत सूक्ष्मता से अपनी रचना का विषय बनाते हुए, समाज की वर्तमान स्थितियों को अपनी रचना में उजागर किया है। जहाँ तक साहित्य के क्षेत्र में 'मध्यवर्ग' की भूमिका का सवाल है, वह स्त्री हो या दलित या अन्य वर्ग, आधुनिकता उसकी चेतना में प्रवेश कर चुकी है। समय के साथ-साथ अपनी मांगो को लेकर यह वर्ग संघर्षशील है। देखा जाय तो 'परंपरा और आधुनिकता की समस्या इसी मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी की समस्या है। परम्परा के साथ आधुनिकता के सामंजस्य का उसे विशेष आग्रह नहीं है, किन्तु जब तक परम्परा एक शक्ति है तब तक केवल नकार से उसका न होना सिद्ध नहीं किया जा सकता। अपने क्रियाकलाप के बीच सतत हुए इस परंपरा के वर्तमान होने का भास होता है। समस्या इसी बुद्धिजीवी मध्यवर्ग वर्ग की है।'[11] देखा जाय तो समाज में पहली बार लोगों के लिए आत्मसंकट खड़ा हुआ है कि व्यक्ति को एक ओर परंपरा उसे अपने चंगुल से निकलने नहीं दे रही है, तो दूसरी ओर आधुनिकता की भीड़ और आधुनिक समाज उसे अपनी तरफ आकर्षित कर रहा है। इन दोनों के बीच आदमी तमाम तरह की आतंरिक और बाह्य द्वंद्वों के बीच समाज में होते हुए भी नितांत अकेला जीवनयापन करने को मजबूर हो गया है। नये कहानीकारों ने आजादी के बाद समाज में आये बदलावों को अपने कहानी का विषय बनाया है। इन्होंने 'परम्परा और आधुनिकता' की टकराहट के साथ-साथ बदल रहे सामाजिक मूल्यों की स्पष्ट झांकी प्रस्तुत किया है। समाज में जितने भी हाशिये (स्त्री, दलित, आदिवासी) के लोग हैं, वे जागरूक हो रहे हैं। नये कहानीकारों में विशेषकर लेखिकाओं की रचनाओं में स्त्री की बदलती छवि और उनकी मानसिक स्थिति बहुत ही सूक्ष्मता से उजागर हुई है। इनकी कहानियों में देखा जाय तो आज परंपरा खतरे में है और आधुनिकता अपना साम्राज्य फैलाती चली जा रही है। 'आधुनिकता का सम्बन्ध मनुष्य की चेतना के विकास से है। यह एक मानसिक परिघटना है। तर्क और विवेक इसका आधार है। खुले लोकतांत्रिक माहौल में ही यह अपनी अभिव्यक्ति कर सकती हैं। स्त्रियों ने ऐसे ही माहौल में अपने ढंग से चीजों को देखने और समझने, उसका इजहार करने और उनके पक्ष में माहौल बनाने के लिए सामाजिक, राजनीतिक पहल करने की शुरूआत की।'[12] जबकि स्त्री के सम्बन्ध में हमारी भारतीय परंपरा रही है कि स्त्रियाँ पुरुषों की सेवा करे, घर और बच्चों की देखभाल से लेकर दाम्पत्य जीवन में यौन के स्तर पर भी। इतना ही नहीं, पूरी तरह से अपने आपको समर्पित करती हुई, अपने किसी हक की मांग न करे। भारतीय समाज में यह विचारधारा चली आ रही है कि समाज का पूरा ढ़ाचा स्त्रियों के त्याग पर आधारित होकर चलता है। समाज के लिए हर तरह का त्याग, बलिदान स्त्रियों के हिस्से में ही होता रहा है। स्त्रियाँ अपने अनुसार अपना जीवनयापन नहीं कर सकती हैं। वे बस वही कर सकती हैं जो उनका समाज उन्हें करने की इजाजत दे। क्योंकि समाज में हर तरह के नियम कानून पुरुषों द्वारा बनाए गए है, जिसमें स्त्रियों की भूमिका गौण रही है। इसलिए स्त्रियों के द्वारा पुरुषवादी मानसिकता के वर्चस्व की सीमा का उलंघन करना अपनी परंपरा को तोड़ना और महान

संस्कृति की सीमा को लांघना है। इसकी सजा देने के लिए हमारे यहाँ कही 'जातीय पंचायत' है तो कही गाँव की 'सामूहिक मानसिकता।' कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि स्त्री के खिलाफ जिस परंपरावादी मानसिकता की दुहाई दी जाती है, यह वही मानसिकता है। 'स्त्री के संदर्भ में परम्परा बनाम आधुनिकता की बहस दरअसल दासता बनाम स्वतंत्रता की बहस है। दूसरी तरफ से इसे ऐसे भी कहा जा सकता है कि परम्परा स्त्रियों की गुलामी की कहानी रही है। आधुनिकता ने पहली बार स्त्री-मुक्ति की संभावनाएं या अवसर प्रदान किये हैं। आज भारतीय समाज 'परम्परा और आधुनिकता' के समर्थकों का युद्ध स्थल बना हुआ है।'[13]

इतिहास को पलटकर देखा जाय तो हमारे भारतीय समाज में ऐसा नहीं है कि समाज सुधारकों ने स्त्रियों के लिए आवाज नहीं उठायी है। हर युग में समाज सुधारकों को स्त्रियों की स्थिति-सुधार के लिए आवाज उठाने की जरूरत पड़ी है। उन्हें यह बताने की भी जरूरत पड़ती रही है कि वह भी इंसान हैं। उन्हें भी समाज में बराबरी से जीने का हक है। फिर भी स्त्रियों का उद्धार न हो सका। अगर उन्हें अपने उद्धार की संभावना कही दिखी तो वह 'आधुनिकता' ने पैदा की है।

आधुनिकता ने ही परम्परावादी सोच को चुनौती दी और उसके मुताबित भौतिक स्थितियों को जन्म दिया। 'अपनी पारम्परिक छवि से स्त्री को उन आईनों से अगर कोई मुक्त कर सकता है तो वह औरत स्वयं।'[14] आज तक स्त्रियों को जिन-जिन परंपरावादी सोच की वजह से दासी बनाकर रखा गया था, उस सोच को चुनौती देती हुई स्त्रियाँ अपने हक और अधिकार के लिए सामने आ रही हैं।

आधुनिकता ने स्त्री-छवि के मायने बदल दिये हैं, स्वेच्छा और स्वतंत्रता के आधार पर स्त्री-पुरूष के बीच मेल-जोल को भी संभव बनाया है। रिश्ते अपनी मर्जी से बनाने के अवसर भी इसने पैदा किये हैं। 'जैसे समाज में न्याय, राजनीति में लोकतंत्र और अर्थ-व्यवस्था में समानता की आकांक्षा जाग्रत होना मानवीय चेतना का हिस्सा बनती गयी है, वैसे ही स्त्री-पुरूष रिश्तों में आपसी समझ स्वेच्छा और भावनाओं की प्रेरणा का महत्व स्थापित होता गया है।'[15] समाज में कोई स्त्री या पुरूष इसलिए दुश्चरित नहीं हो जाता कि उसने किसी स्त्री या स्त्री ने किसी पुरूष के साथ अपनी समझ से दोस्ती का रिश्ता बनाया है या विवाह के बाद भी उसका पुरूष पात्र से दोस्ती है या उसका कोई दोस्त है। यह आधुनिक विचारधारा की ही देन है।

इस आधुनिक समाज में परंपरावादियों की यह साजिश है कि कोई भी स्त्री हो घर की हो या बाहर की, वह बाहर से आधुनिक दिखे लेकिन अन्दर से परंपरावादी होनी चाहिए। जिससे उन पर अपना हक कायम रखा जा सके। क्योंकि उन्हें डर है कि कही स्त्रियाँ उनसे आगे न निकल जाये। राजेंद्र यादव के शब्दों में कहे तो भारतीय 'स्त्री की आकांक्षा संबंधों से मुक्ति की नहीं है, संबंधों में मुक्ति की है। उसी तरह वह पुरूष से मुक्ति नहीं पुरूष की मुक्ति की है जिससे दोनों एक-दूसरे की मुक्ति के संगी बन सके। आधुनिक स्त्री की चाहत पारिवारिक संबंधों के समीकरणों और भूमिकाओं के बंटवारे में से वर्चस्व के झगड़े को खत्म करने से है ताकि वहां स्त्री दमित और शोषित न हो।'[16] मैत्रेयी पुष्पा के शब्दों को उधार लेकर कहे तो आज की स्त्री सम्मान नहीं समानता चाहती है। क्योंकि उसे आज तक 'सम्मान' के नाम पर ही कभी 'देवी' कहकर और कभी आदर्श नारी की संज्ञा देकर छला जाता रहा है। अब उसे समानता और अपना हक चाहिए।

(1) परिवर्तन की प्रक्रिया: समाज में बदलती स्त्री की छवि

उषा प्रियंवदा की कहानियों में स्त्री के पत्नी रूप को अनुगामिनी रूप में चित्रित न करके सहभागिनी के रूप में चित्रित किया गया है। इसलिए इनकी कहानियों में पति-पत्नी के बीच टकराव और टूटन की स्थिति को देखा जा सकता है। समाज में आये बदलाव की वजह से 'अब विवाह को सामाजिक संस्था न मानकर निहायत 'निजी मसला' माना जाने लगा है। बहुत अधिक निजी और 'पर्सनल' के चलते अब शादी के बंधन में जिंदगी भर साथ निभाने की कसमें टूट रही हैं:, लेकिन यह निजी शब्द चिपकाकर पत्नी को घर की चौखट में कैदकर अपनी मनचली आकांक्षाओं और अतिरिक्त मन का आश्रय कहीं और ढूढ़ लेता है।'[17] इस प्रकार स्त्री-पुरूष रिश्तों में आये बदलाव, आधुनिक मूल्यों और अपनी भारतीय परम्परा से जूझती भारतीय स्त्री विदेशी परिवेश में वहाँ कि सामाजिक स्थितियों से प्रभावित तो हो रही हैं, पर वह अपनी भारतीय संस्कृति और परम्परा को भी पूरी तरह से छोड़ नहीं पा रही है। जिस कारण उसके मन में द्वन्द्व की स्थितियां पैदा होना स्वाभाविक है। उषा प्रियंवदा आधुनिक समाज में स्त्री-पुरूष संबंधों में आये बदलाव और उनकी मनरू स्थिति को बहुत बारीकी से पकड़ने की सफल कोशिश की हैं। आधुनिक समाज में यह कहना गलत न होगा कि स्त्री-पुरूष के बीच रिश्ते भावना से कम बल्कि स्वार्थ सिद्ध की भावनाओं को केंद्र में रखकर दिमाग से ज्यादा बनाए जा रहे हैं। जिसकी शिकार पुरूष की अपेक्षा स्त्रियाँ ज्यादा हो रही हैं। इस प्रकार दिन-प्रतिदिन आधुनिक स्त्री की छवि बदलती जा रही है।

सम्बन्ध

कहानी की नायिका श्यामला विदेशी परिवेश में रहने वाली भारतीय स्त्री है। वह वैवाहिक सम्बन्धों में बंधने की अपेक्षा बन्धन मुक्त होकर जीवनयापन करने में विश्वास करती है। उसे पति-पत्नी का रिश्ता पसंद नहीं है। प्रेमी सर्जन के कहने पर कि-

'श्यामला, मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। मैं घर-बार, बाल-बच्चे सब तुम्हारे लिए छोड़ सकता हूँ। श्यामला ने हथेली से उसका मुँह बंद कर दिया। बहुत देर बाद कहा- क्या हम ऐसे ही नहीं रह सकते- प्रेमी, मित्र, बन्धु! क्या वह सब छोड़ना जरूरी है? मैं तो कुछ नहीं मांगती।'[18] श्यामला अपने जीवन में केवल प्रेमी और मित्र का ही रिश्ता पसंद करती है। दूसरी तरफ हम देखते हैं कि सुनीता जोकि भारतीय लड़की होती है, वह प्रेमी के छोड़ देने के बाद बिना 'अबार्शन' कराये भारत वापस आना नहीं चाहती है। जिस कारण वह आत्महत्या कर लेती है। उसके ऐसा कर लेने पर श्यामला को बहुत अफसोस होता है। वह सोचती है कि अगर उसने चाहा होता तो उसकी जान बच सकती थी। स्त्री के प्रेम संबंधों और उसकी स्थिति को लेकर भारत में ही नहीं विदेशों में भी स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। प्रेम-संबंधो को लेकर परिवार और समाज में आज भी बहुत संकुचित मानसिकता है। कहानी में श्यामला आधुनिक स्त्री की छवि का प्रतिनिधित्व करती है तो दूसरी तरफ सुनीता विदेशी परिवेश में रहते हुए भी पूरी तरह से परंपरावादी भारतीय स्त्री की छवि का प्रतिनिधित्व करती है। भारतीय स्त्री श्यामला पूरी तरह से आधुनिक विचारों की है। इसलिए वह सुनीता को 'अबार्शन' कराने की बात पर समझाती है कि 'वह साहस कर अपने पेरेंट्स को साफ-साफ सारी बात लिख दे। पर वह केवल उन्नीस साल की भोली-भाली लड़की थी- एकदम हेल्पलेस, भीरू।'[19] जिस कारण विकल्प होते हुए भी आत्महत्या करना ही उचित समझा।

मोहबंध

कहानी में अचला-देवेन्द्र और नीलू-राजन के संबंधों के बीच आने वाले बदलाव का कारण कहीं न कहीं बदलते समय और समाज के मानसिक द्वन्द्व का ही परिणाम है। जिसकी शिकार आज की युवा पीढ़ी ही हो रही है।

प्रतिध्वनियाँ

कहानी की स्त्री पात्र वसु को उसके मन में चल रहे आतंरिक द्वंद्व के कारण उसे अपने पति का प्यार और उसका परिवार बन्धन लगने लगता है। जिसकी वजह से वह पति और परिवार तक ही बंधकर रहना नहीं चाहती है। स्वयं की मुक्ति के लिए विदेश में रहने का निश्चय करती है। इस दौरान वह बहुत लोगों के संपर्क में आती है, उनसे सम्बन्ध भी स्थापित करती है। लेकिन अंत में वह महसूस करती है कि खुलेपन और स्वतंत्र जीवनयापन की वजह से वह खुद के जाल में फँस चुकी है, जहाँ से वह चाहकर भी नहीं निकल पाती है। ऐसे आधुनिक और पारम्परिक मनरू स्थितियों के बीच फंसकर वह अपना सुख-चैन सब खो देती है। इस प्रकार हम देखते हैं आधुनिकता ने स्त्री की बदलती छवि को अगर नया रूप दिया है तो उसे कही न कही विकृत भी किया है।

कितना बड़ा झूठ

इस कहानी में त्रिकोण प्रेम की वजह से स्त्री-पुरूष के संबंधों में आने वाले बदलाव को उजागर किया गया है। प्रो. किरन विवाहित होने पर भी अपने प्रेमी मैक्स को भुला नहीं पाती हैं। मानो वह खुद को ही झुठला रही हो, दोनों धारातलों पर पति के साथ भी और प्रेमी के साथ भी। इस प्यार के खेल में किरन की समस्या पूर्णतया व्यक्तिगत है, जो उन्हें दिन-रात भीतर ही भीतर सालती रहती है। यहाँ पर हम देखते हैं कि किरन शादी के बाद भी मैक्स से प्रेम करती है, यह आधुनिक विचारधारा का प्रतीक है। लेकिन किरन अपने पति के प्रति कादार भी बने रहना चाहती है, यह उसके परम्परावादी विचारधारा का प्रतीक है। किसी और से शादी करने के बाद भी अपने प्रेमी से यह उम्मीद करना कि वह उसके प्रति कादार रहें और पूरा जीवन उसकी यादों में बीता दे, तो यह परम्परावादी सोच का ही एक रूप है। किरन फोन पर मैक्स की पत्नी वारिया की आवाज सुनकर चौक जाती है। फिर दबे स्वर में कहती है कि 'मेरी ओर से मैक्स को बधाई दे देना'[20] किरन अपने पति और बच्चों के साथ खुशहाल जिंदगी व्यतीत करने के बावजूद प्रेमी मैक्स के लिए तड़पती रहती है। इतना ही नहीं प्रेमी मैक्स को ही कसूरवार समझती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि समय और समाज की बदलती गतिविधियों से साथ-साथ स्त्री की छवि में विविध स्तर पर परिवर्तन हुआ है। अंत में किरन जैसी द्वंद्व ग्रस्त स्त्री स्वयं अपने अंर्तद्वंद्व से निकलकर अपने वर्तमान को पूरी तरफ से स्वीकार करते हुए, अपने घर और परिवार को वरीयता देना उचित समझती है।

(2) स्त्री जीवन में प्रेम और अनाम रिश्तों की अहमियत

आधुनिक समाज में 'विवाह संस्था के अन्दर विषम और क्रूर होते संबंधों ने स्त्री को विवाह के बाहर प्रेम आधारित रिश्तों की ओर आकृष्ट किया। विवाह से जुड़े यौन-एकाधिकार स्त्री को सम्पति या पूँजी की तरह देखता है अथवा वस्तु की तरह।'[21] उषा प्रियंवदा की कहानियों का मुख्य विषय प्रेम है। इन्होंने स्त्री जीवन में प्रेम-सम्बन्ध को ज्यादा अहमियत दी है। इनकी कहानियों की स्त्री पात्र प्रेम के क्षेत्र में सक्रिय भूमिका निभाती हैं। देखा जाय तो इनके यहाँ स्त्रियाँ प्रेम के सम्बंध में पूरी तरह परंपरावादी हैं। वह अपने जीवन में किसी पुरुष पात्र से 'प्रेम' करती हैं, यह तो आधुनिकता है, या इस प्रकार वह आधुनिक विचारों का प्रतिनिधि त्व करती हैं, लेकिन वह एक बार किसी पुरुष पात्र से 'प्रेम' करने के बाद पुनरू किसी और पुरुष से प्रेम नहीं कर पाती हैं या किसी और की नहीं हो पाती है, यह परम्परा है। इस प्रकार वह अपनी परम्परा को न छोड़ पाने के कारण परम्परावादी विचारधारा की प्रतीक भी हैं।

लेकिन इनकी कहानियों में स्त्रियाँ अपने जीवन की असहाय परिस्थितियों को चुनौती के रूप में स्वीकार कर उसका सामना निर्भीकता एवं सहजता से करती हैं। प्रेम के सम्बन्ध में बात करे तो 'प्रेम परंपरा को तोड़ता है और कायम करता है अपनी नई राह, नई दिशा। यह प्रेम ही है जो व्यक्तियों को 'पर' से जोड़ता है' जो मनुष्य की 'स्व' से समाप्ति तक की यात्रा में प्रेरक और पूरक की भूमिका में रहता है। प्रेम उस अनंत ऊर्जा का स्रोत है जो बीहड़-से-बीहड़ स्थितियों व जोखिमों का मुकाबला करने की शक्ति देता है, प्रेम ही बदल सकता है समाज।'[22]

उषा प्रियंवदा ने अपनी कहानियों में अनाम (पति-पत्नी से इतर प्रेम-सम्बन्ध) रिश्तों को भी जगह दी हैं, जिसका वह खुलकर समर्थन भी करती हैं। प्रेम से सम्बंधित शुरुआती दौर की ज्यादातर कहानियाँ सुधारवादी और आदर्शवादी नजरिये से लिखी गई हैं, जिसमें हम अकेली राह की गौरी और रहमान के प्रेम-संबंध को देख सकते हैं। गौरी अपने प्यार के लिए भारतीय समाज में चली आ रही रूढ़िवादी परम्पराओं से लगातार टकराती है। कहानी में गौरी पढ़ी-लिखी, नौकरी पेशा वाली आधुनिक स्त्री है। वह रहमान नाम के लड़के से प्रेम करती है और उससे शादी भी करना चाहती है। आधुनिक स्त्री होने के कारण वह किसी भी जाति-पात या धर्म के बन्धन में विश्वास नहीं करती। उसके लिए अगर कोई धर्म नाम की चीज है, तो वह है मानव-धर्म। लेकिन उसका परिवार पूरी तरह परम्परावादी है। जब गौरी की माँ को रहमान के बारे में पता चलता है, तो वह अपना आपा खो देती हैं और गौरी को अनाप-सनाप कहने लगती हैं। तब गौरी कहती है कि 'तुम क्यों माँ, मैं ही मर जाती हूँ। तब तुम्हारी छाती में ठंडक पड़ेगी, गौरी की माँ ने कहा- हाँ, मर जा। मैं बताशे बाटूंगी, ढोलक बजवाऊंगी। मर जा! मैं तेरा मुँह भी देखना नहीं चाहती। ऐसी बेटी का मर जाना ही अच्छा।'[23] गौरी के पिता अपने सारी लड़कियों की शादी बचपन में ही कर देते हैं लेकिन गौरी को पढ़ाने का निश्चय करते हैं। इस प्रकार गौरी के पिता जी समाज में चली आ रही परम्परागत मान्यताओं का अतिक्रमण करआधुनिक विचारधारा के साथ स्त्री-शिक्षा को महत्व देते हैं। परिवार में गौरी के रहमान से शादी करने के फैसले से माँ को ही ज्यादा आपत्ति होती है। उन्हें अपने से ज्यादा समाज की परवाह होती है कि लोग क्या कहेंगे? गौरी के मन में अपने और रहमान के रिश्ते को लेकर किसी प्रकार का कोई द्वंद्व नहीं होता। लेकिन रहमान सोचता है कि गौरी को बाद में अफसोस न हो। इसलिए बार-बार उसे अपने रिश्ते के बारे में अच्छे से सोच लेने की बात करता है। कहानी के अंत में माँ के आतंरिक द्वंद्व को उजागर किया गया है। रहमान की अचानक मृत्यु हो जाने पर माँ को सुकून से ज्यादा बेचैनी होती है। 'उनके सामने बड़ी लड़की सावित्री का चित्र आया, 'हाय, मेरी गौरी भी!' एक तीखी कटार-सी उनके हृदय में बिधती चली गई।'[24] हमारे भारतीय समाज में प्रेम सम्बन्ध हो या विजातीय या किसी अन्य धर्म में शादी करना पाप समझा जाता है। समाज में ऐसी धारणा बनी हुई है कि जो भी लड़का या लड़की विजातीय या दूसरे- धर्म में शादी करते हैं, वह अपनी जिंदगी में सबसे बड़ा पाप करते हैं। जिस कारण समाज उन्हें स्वीकार नहीं करता है। समाज के भय से परिवार भी उन्हें स्वीकार करना नहीं चाहता है, क्योंकि ऐसा करने से उनकी इज्जत चली जाती है। ऐसी बेतुकी परम्परा का शिकार आज भी हमारी पीढ़ी हो रही है। उषा प्रियंवदा की यह कहानी अप्रैल सन 1959 की है। उस समय उन्होंने समाज की जिस समस्या को उठाया है, उसमें आज थोड़ा-बहुत बदलाव की गुंजाइश जरूर है, लेकिन वह समस्या आज भी समाज में बनी हुई है।

फिर बसंत आया

इस कहनी में प्रेम और अंत में मिलन कराकर एक तरह से आदर्श स्थापित करने की कोशिश की गई है। उसी तरह 'कोई नहीं' कहानी की नमिता अक्षय से प्रेम करती है लेकिन उसके भूल जाने पर भी वह उसे भूल नहीं पाती है। इस प्रकार वह अपनी नियति मानकर आजीवन उसी की होकर रह जाती है। यह प्रेम में परम्परावादी विचारधारा का समर्थन करना हुआ। प्रेम के सम्बन्ध में यह धारणा रही है कि प्रेम एक ही बार होता है, दुबारा प्रेम हो ही नहीं सकता। यह पूरी तरह से परम्परावादी विचारधारा का समर्थन करना है। मन्नू भंडारी की कहानी 'यही सच है' की 'दीपा' के प्रेम संबंधों में आये बदलाव और उसकी मनरू स्थिति को देखकर समझा जा सकता है कि सच क्या है?

कँटीली छाँह

इस कहानी में राजी और आनंद का स्वच्छंद प्रेम मुखरित हुआ है। जिसे विकसित करने में परिवार का पूरा-पूरा सहयोग है। इसलिए हम देखते हैं कि उनके प्रेम-सम्बन्धों को लेकर परिवार या समाज में किसी प्रकार की चर्चा या कोई बंधन नहीं है। आनंद और राजी बाग में घूमने-घूमते वहाँ पड़ी एक बेंच पर बैठ जाते हैं। इस दौरान आनंद ने थोडा पास सरककर कहा- ''और सुनाओं राजी, तुम कैसी हो। दिन में कितनी बार मेरी याद करती थीं।'[25] दूसरी तरफ जगतबाबू और इंद्रा का विषम वैवाहिक जीवन। जगत बाबू पत्नी इंद्रा के तीखे स्वभाव और व्यवहार से तंग आकर कम्पाउण्डर की बीवी राधा के साथ यौन-संबंध बनाते हैं। कहानी में उषा प्रियंवदा स्वतंत्र यौन-सम्बन्ध की इच्छा-शक्ति का समर्थन करती हैं। यौन-संबंधों को मनुष्य की स्वाभाविक जरूरत मानती है। वह मानव जीवन की अन्य आवश्कता की तरह यौन-सम्बन्ध को भी एक जरूरत से ज्यादा कुछ नहीं मानती है। उनके यहाँ यौन-शुचिता का कोई प्रश्न ही नहीं है। लेकिन परंपरावादी पुराने

विचारों से मोह के कारण जगत बाबू के ऐसे व्यवहार से पूरे परिवार और समाज में खलबली मच जाती है। आधुनिक विचारधारा का प्रतिनिधित्व करने वाली राजी की मनरूस्थिति स्पष्ट रूप से उजागर होती है। 'मास्टर साहब चले गए। राजी सोच उठी। वह तो उनसे यह कहने आयी थी कि मास्टर साहब, चाहे कोई कुछ कहे, मेरे लिए आप उतने ही आदर के पात्र हैं। जीवन की राह चलते हुए यदि कोई राही किसी पेड़ की 'छाँह' में खड़ा हो जाए, तो मैं उसे बुरा नहीं समझती, क्योंकि मैंने जाना है कि सुख क्या है।'[26] इस प्रकार परिवार और समाज में आज की नयी पीढ़ी पारम्परिक मूल्यों से टकराती ही नहीं बल्कि आधुनिक मूल्यों को स्थापित करने के लिए संघर्षशील भी है।

पुनरावृति

इस कहानी में चिरंतन अपनी पत्नी से प्रेम करने के साथ-साथ उनका अपनी शोध-छात्रओं के साथ यौन-सम्बन्ध तथा मेरी के प्रेम को बहुत बारीकी से उजागर किया गया है। चिरंतन आधुनिक पुरुषवर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। वह अपने आधुनिक जीवन में न पूरी तरह से परम्परावादी हैं और न ही पूरी तरह से आधुनिकता को ही स्वीकार कर पाते हैं। इस प्रकार वह अपने जीवन में दुहरे चरित्र को जीते हैं।

विदेशी छात्र मेरी चिरंतन से प्रेम करती है और उनसे शादी करना चाहती है। चिरंतन मेरी के साथ यौन-सम्बन्ध बनाते जरूर है लेकिन वह उसे प्यार नहीं करते हैं, जिस कारण वह मेरी के कहने पर अपनी पत्नी और बच्चों को छोड़ने से मना कर देते हैं। उसी तरह 'चाँद चलता रहा' की रोहिनी की शादी अरविन्द नामक उस युवक से तय होती है जिससे वह प्रेम भी करती थी। लेकिन भारतीय समाज में यौन-शुचिता को लेकर बहुत ही गूढ़ मानसिकता यह है कि शादी के पहले कोई लड़की यौन-सम्बन्ध नहीं बना सकती है, अगर वह ऐसा करती है तो उसकी पवित्रता खत्म हो जायेगी। इस प्रकार उसे एक चरित्रहीन स्त्री की संज्ञा दे दी जाएगी। लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि समाज और परिवार में यह नियम केवल स्त्रियों के लिए ही बनाए गए हैं, पुरुषवर्ग के लिए ऐसी कोई मान्यता नहीं है और न ही ऐसा करने पर उनकी पवित्रता का हनन होता है। इसलिए वह किसी से भी यौन-सम्बन्ध बनाने के लिए मुक्त है। रोहिनी अपनी परम्परा और मर्यादा के कारण जिससे प्रेम करती है, उसके लाख कहने पर भी शादी से पहले यौन-सम्बन्ध बनाने से मना कर देती है। दूसरी तरफ अरविन्द आधुनिक विचारों का होने के कारण, वह पारम्परिक मूल्यों को नकारते हुए आधुनिक मूल्यों और स्वयं की इच्छा को महत्व देते हुए हमेशा आज में जीता है। वह रोहिनी के मना करने पर कहता भी है कि हतुम सौदा करोगी रोहिनी, मैं तुम्हारी मांग में सिन्दूर डालूँगा, उसके बदले में तुम मुझे शरीर दोगी। आओ रोहिनी, हम दोनों केवल प्रेमी रहें, बन्धनों से मुक्त'[27] अफसोस! अरविन्द की अचानक मृत्यु हो जाती है और रोहिनी अपने आपको दोषी समझकर यौन-शुचिता के प्रश्न को नकारती हुई, पूरे जीवन को बर्बाद कर देना ही उचित समझती है। इस प्रकार वह आधुनिक और पुराने मूल्यों के बीच जूझती हुई जीवन में नितांत अकेली हो जाती है। 'चाँदनी में बर्फ पर' में विदेशी स्त्री मेरी जो भारतीय युवक से प्रेम और फिर शादी करती है लेकिन उससे इतर वह अपने दोस्तों के साथ भी रहना पसंद करती है। उसे अपने पति और दोस्तों के बीच कोई अंतर नजर नहीं आता है। आधुनिक मूल्यों के आधार पर जीवनयापन करने वाली मेरी आधुनिक स्त्री की छवि को उजागर करती है तो दूसरी तरफ भारतीय समाज में स्त्री के प्रेम सम्बन्धी, शादी और पति के साथ अपने परंपरागत मूल्यों को कल्याणी के माध्यम से लेखिका ने स्पष्ट करने का सार्थक प्रयास किया है। कल्याणी अपने पूर्व प्रेमी के छोड़ देने के बाद दुबारा उसकी तरफ आकर्षित नहीं होती है। वह अपने अतीत को भूलाकर आज में जीने को वरीयता देती है।

स्वीकृति

इस कहानी में जपा और सत्य के प्रेम सम्बन्ध के साथ-साथ दोनों के संबंधों के बीच आई दूरियों की वजह से तीसरे व्यक्ति वाल का आगमन होता है। जपा और सत्य के प्रेम के बीच वाल का रिश्ता अनाम कहा जा सकता है, लेकिन किसी के साथ समझौता करने से अच्छा ही है कि उससे अलग होकर एक नयी जिंदगी की शुरूआत की जाय।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जपा की जिंदगी में सत्य की अपेक्षा वाल नामक व्यक्ति की अहमियत बढ़ जाती है। पति-पत्नी के रिश्तों के बीच आने वाले हर एक तीसरे व्यक्ति का रिश्ता समाज में अनाम रिश्ता होता है। लेकिन लेखिका अपनी कहानी में आने वाले ऐसे व्यक्ति वाल और जपा के रिश्ते की अहमियत को समझती ही नहीं हैं बल्कि स्वीकृति भी देती हैं। जपा भारतीय पतिव्रता स्त्री की तरह एकनिष्ठ होकर अपने पति सत्य से प्रेम करती है। लेकिन जब उसे यह एहसास होता है कि सत्य उसकी भावना को अहमियत नहीं दे रहा है, उन दोनों के बीच का रिश्ता केवल स्वार्थ केन्द्रित हो गया, तब वह ऐसे रिश्तों के बीच से निकल जाना ही उचित समझती है। क्योंकि समझौता किसी भी रिश्ते की बुनियाद को खोखला कर देता है। जपा के द्वारा खुद यह निर्णय करना आधुनिकता का प्रतीक है। आज स्त्री अपने वजूद की अहमियत को समझ अपने हक के लिए मुँह खोल रही हैं।

(3) पारिवारिक टूटन की स्थिति और सामाजिक जिम्मेदारियों का बदलता स्वरूप

उषा प्रियंवदा की कहानियों में विदेशी सभ्यता का प्रभाव होने के कारण पारिवारिक टूटन की समस्या को विविध आयामों में

प्रस्तुत किया गया है। भारत में औद्योगिकरण और आधुनिकीकरण का परिणाम यह हुआ है कि परिवार विच्छेद होने लगा। समाज में आधुनिक विचारधारा ने नई पीढ़ी के संघर्ष को जन्म दिया है। लेकिन पुरानी पीढ़ी का नई पीढ़ी से असहयोग का भाव और उनके विचारधारा की टकराहट ही परिवार और समाज में विघटन के रूप में सामने आ रही है।

वापसी

वापसी कहानी पुराने मूल्यों से वापसी और एक नये मार्ग की ओर अग्रसर होने की कहानी है। परिवार से अकेले गजाधर बाबू मजबूर होकर अपनी नई राह के लिए निकल पड़ते हैं। इस ''आधुनिक युग में यह वास्तविक यथार्थ है कि परिवार में पुरामूल्यों के प्रतीक पिता का कोई स्थान नहीं रह गया है। उस किसी भी व्यक्ति का कोई महत्व नहीं रह गया, जो बदलती परिस्थितियों से समझौता नहीं कर पाया है।'[28] पारिवारिक रिश्तों के सभी पहलू स्वार्थ परक होते जा रहे हैं। जिस कारण परिवार में नयी व्यवस्था पिता के मूल्यों को, उनकी उपस्थिति को स्वीकार ही नहीं कर पाती है। समाज में जिस पत्नी को आज तक अनुगामिनी माना जाता रहा है उसका भी रूप बदला है। गजाधर बाबू की पत्नी ने नये मूल्यों के साथ जीना सीख लिया है। गजाधर बाबू के साथ चलने के लिए कहने पर उनकी पत्नी कहती है' 'मैं चलूंगी तो यहाँ का क्या होगा? इतनी बड़ी गृहस्थी फिर सयानी लड़की।'[29] पत्नी सीधे-सीधे मना तो नहीं करती लेकिन चली आ रही स्त्री के अनुगामिनी रूप को अस्वीकार कर देती है।

इस प्रकार देखते हैं कि समाज और परिवार का प्रत्येक सम्बन्ध टूट रहा है। प्रत्येक व्यक्ति हर एक-दूसरे को अविश्वास के नजरिये से देख रहा है। समाज और परिवार में आये इस बदलाव को बहुत बारीकी और सहज भाव से लेखिका ने पकड़ने की कोशिश की है। कहानी के पात्र गजाधर बाबू भारतीय परम्परावादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनसे दूर शहर में रहने वाला उनका परिवार (बेटी-बेटा, बहू) आधुनिक मूल्यों को वरीयता देते हैं। इस प्रकार वे आधुनिक विचारधारा को स्वीकारने वाली नयी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं। पिता के 'रिटायर' होने के बाद घर आ जाने पर आधुनिक और पारंपरिक मूल्यों के बीच टकराहट होना स्वाभाविक था। पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करने वाले गजाधर बाबू परिवार को अपनी मान्यताओं के अनुसार चलाना चाहते हैं। लेकिन नयी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करने वाले उनके बच्चें किसी भी प्रकार के बंधन में बंधना पसंद नहीं करते हैं। जब पत्नी घर में किसी के हाथ न बटाने की शिकायत गजाधर बाबू से करती है, तो वह बेटी बसन्ती को बुलाकर प्यार से समझाते हैं कि 'तुम सुबह पढ़ लिया करो! तुम्हारी माँ बूढ़ी हुई, उनके शरीर में अब वह शक्ति नहीं बची हुई है। तुम हो, तुम्हारी भाभी हैं, दोनों को मिलकर काम में हाथ बंटाना चाहिए।' बसन्ती के चले जाने पर हउसकी माँ ने धीरे से कहा, 'पढ़ने का तो बहाना है। कभी जी ही नहीं लगता, लगे कैसे? शीला से ही फुरसत नहीं, बड़े-बड़े लड़के हैं उसके घर में, हर वक्त वहाँ घुसे रहना, मुझे नहीं सुहाता। मना करो तो सुनती नहीं।'[30] सम्बन्धों में आया यह बदलाव माँ-बाप, पुत्र-पुत्री, भाई-बहन, पति-पत्नी, प्रेमी-प्रेमिका, आदि रिश्तों के बीच विविध स्तरों पर देखा जा सकता है।

गजाधर बाबू की पत्नी नयी पीढ़ी के साथ रहते हुए समझौता जरूर कर लेती हैं लेकिन वह अपनी पारंपरिक विचार धारा की मान्यताओं से निकलकर आधुनिक मूल्यों को स्वीकार नहीं कर पाती हैं। जिसकी शिकायत वह मौका मिलने पर पति गजाधर बाबू से भी करती हैं। नयी पीढ़ी अपने ही लोगों के प्रति संवेदनहीन होती जा रही है। पारिवारिक और सामाजिक जिम्मेदारियों को वहन करने से कतरा रहे हैं। गजाधर बाबू का बेटा अमर कहता है 'बूढ़े आदमी हैं' अमर भुनभुनाया, 'चुपचाप पड़े रहें। हर चीज में दखल क्यों देते हैं।'[31] बेटे की बातों का माँ भी समर्थन करती हैं। क्योंकि उन्हें पति के साथ नहीं, बहू-बेटे के साथ ही रहना है। गजाधर बाबू आधुनिक और पारम्परिक मूल्यों की टकराहट के बीच अपने आपको स्वीकार नहीं कर पाते और अंत में घर से वापसी का निर्णय कर नौकरी पर लौटना ही उचित समझते हैं। गजाधर बाबू का अकेलेपन और अपने ही परिवार में महसूस होने वाली ऊब, घुटन के सम्बन्ध में नामवर सिहं लिखते हैं कि- ''ऐसा अकेलापन जो कहीं न कहीं आज सबके अन्दर मौजूद है परन्तु सहयोगी कोई निकटतर से निकटतर व्यक्ति भी नहीं हो सकता।'[32]

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि किस प्रकार आधुनिकता और परंपरा के बीच दो पीढ़ियों की टकराहट की वजह से परिवार टूट रहा है और सामाजिक जिम्मेदारियां भी बदलती जा रही हैं। नयी पीढ़ी के लोग चली आ रही परंपरा को बंधन और पुरानी पीढ़ी के लोगों को बोझ समझकर उन्हें स्वीकार करना नहीं चाह रहे हैं। दूसरी तरफ ज्ञानरंजन की कहानी 'पिता' में स्थिति बिलकुल अलग है वहाँ पर पुरानी पीढ़ी आधुनिक पीढ़ी की गतिविधियों को व्यर्थ समझ उसे स्वीकारना नहीं चाह रही है जबकि नयी पीढ़ी अपनी हर-एक कोशिश करती है कि पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करने वाले पिता आधुनिक जीवनशैली को स्वीकार कर ले। लेकिन पुरानी पीढ़ी के द्वारा उसे स्वीकार न कर पाने के कारण ही परिवार और समाज में बिखराव की स्थिति बनी हुई है।

जिंदगी और गुलाब के फूल

इस कहानी में बेरोजगार भाई सुबोध की अपेक्षा और बहन वृंदा को ज्यादा महत्व मिलता है, क्योंकि वह नौकरी करके

घर को संभालती है। बेरोजगार होने की वजह से घर में सुबोध की महत्ता बहन से कम होने लगती है। माँ भी बेटी को ज्यादा महत्व देती हैं। जिस कारण सुबोध के मन में आक्रोश है, ग्लानि है। वह ऐसे ही तमाम तरह के आतंरिक द्वंद्व से गुजर रहा होता है, लेकिन उसे घर या परिवार में समझने वाला कोई नहीं होता है। इस प्रकार परिवार और समाज में पुरूष की वरीयता की मान्यताएं टूट रही हैं। आधुनिक समाज में स्त्री-पुरूष को वरीयता न देकर उसके हुनर और काम को महत्त्व मिलने लगा है।

आधुनिकता ने घर, परिवार और समाज में उसको महत्व देना शुरू कर दिया है जो किसी काम के योग्य हो, वह पुरूष या स्त्री कोई भी हो सकता है। कहानी में वृंदा या सुबोध का मसला केवल भाई-बहन के बीच का नहीं है बल्कि ये चरित्र पूरे समाज में स्त्री-पुरूष के संबंधों के साथ-साथ समाज में उनके वजूद को भी उजागर करते हैं। विशेषकर स्त्री के अस्तित्व को।

हमारे समाज में स्त्री के लिए घर के अन्दर रहने की जो सीमा निर्धारित की गई थी कि वह घर से बाहर नहीं निकल सकती है। उसका काम केवल घर के अन्दर है। बाहरी काम या जीविकोपार्जन का साधन पुरुष वर्ग ही कर सकता है, स्त्री नहीं। यह विचारधारा स्त्री के वजूद को गुलाम बनाकर घर की चारदीवारी के अन्दर कैद करने की थी। आधुनिकता ने इस पारंपरिक विचारधारा को तोड़ा है। आज स्त्रियाँ स्वतंत्र जीवनयापन करने के लिए स्वतंत्र हो रही हैं। स्त्री की यह स्वतंत्रता पुरुष वर्ग को सहन न हो पाने के कारण पारिवारिक रिश्तों और समाजिक गतिविधियों में बदलाव आना स्वाभाविक है।

ट्रिप

आधुनिकता के इस दौर में सम्बन्धों की स्थिति बहुत ही घातक होती जा रही है। प्रेम और परिवार के बीच अपनेपन नाम की कोई चीज ही नहीं रह गई है। आज प्रेम का रूप बहुत बदल गया है। जैसा कि ट्रिप कहानी में पति-पत्नी कुछ दिनों बाद एक-दूसरे से ऊब जाते हैं। उन्हें लगने लगता है कि कोई किसी एक के साथ बहुत दिनों तक कैसे रह सकता है? और किसी एक से ही कब तक प्रेम कर सकता है। शादी के कुछ दिनों बाद उन्हें अपने जीवन में एकरसता महसूस होने लगती है। जिस कारण पति नशे में धुत रहने लगता है और पत्नी अपनी कामुकता की पूर्ति के लिए अन्य पुरुषों से सम्बन्ध स्थापित करती है। पति को पत्नी के ऐसे गैर-सम्बन्धों से कोई फर्क भी नहीं पड़ता है, न ही पति को पत्नी से कोई मतलब ही होता है।

इसी तरह दृष्टिदोष

कहानी की नायिका चंद्रा को अपना पति और परिवार रास नहीं आता है। इतना ही नहीं पति और परिवार का प्रेम उसे बंधन लगने लगता है। जिस कारण वह घर से अलग और अकेले रहकर जीवनयापन करने का निश्चय करती है। कुछ दिनों बाद उसे खुद भी अपने फैसले से बहुत दु:ख होता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि आधुनिक पीढ़ी बहुत ही दुविधा ग्रस्त होकर जीवनयापन कर रही है। वह पारंपरिक मूल्यों से निकलना भी चाहती है और आधुनिक मूल्यों को पूरी तरह स्वीकार न कर पाने के कारण बहुत जल्दी ही ऊब जाती है। जिस कारण पुनरू अपने पारिवारिक जिम्मेदारियों के बीच लौटना चाहती है। लेकिन कभी-कभी जीवन के सफर में चन्द्रा जैसी बहुत सी स्त्रियाँ इतना आगे निकल गई होती हैं कि वहां से लौट पाना उनके लिए आसान नहीं होता है। इस प्रकार समाज में बहुत सी स्त्रियाँ आधुनिकता की चकमक में भ्रामित हो, अपने सुखमय जीवन को त्याग कर अकेलेपन और ऊब की शिकार होती जा रही हैं।

एक कोई दूसरा

कहानी की नायिका नीलांजना पुरुषों से घिरी होने पर भी पुरुषों से अलग रहकर जीवन यापन करने का निर्णय करती है। वह धानोपार्जन के स्थान पर शिक्षा को महत्त्व देती है। जिस कारण शादी करने से मनाकर वह रिसर्च करने का निश्चय करती है। निलांजला जो पुरुषों को पसंद नहीं करती। शादी करने के लिए भाभी के कहने पर कि- 'मन के मीत की बात कुछ और होती है।' वह जबाव देते हुए कहती है ख्रह्मन के मीत नही भाभी तन के भोक्ता कहो।'[33] लेकिन जब वह डॉ0 कुमार के संपर्क में आती है तो पुरुषों के प्रति उसकी विचारधारा बदलने लगती है। डॉ0 कुमार के बीमारी का पत्र मिलते ही वह पूरी तरह टूट जाती है। इस प्रकार वह आधुनिक और पारम्परिक अंर्तदवंद्वों के बीच जूझती हुई, अपनी 'पहचान' के लिए पढ़-लिखकर आत्मनिर्भर होना चाहती है और शादी न करने का निश्चय करती है।

इस प्रकार हम देखते है कि उषा प्रियंवदा अपनी कहानियां के माध्यम से भारतीय समाज में व्याप्त मान्यताओं और संस्कारों पर खुलकर चोट करती हैं- जैसाकि हमारे भारतीय समाज में 'पति की दूसरी शादी को लेकर भारतीय औरतों की स्थिति असमंजस की ही रहती है। जिसके संस्कारों में 'त्वमेव सर्वं मम देव देव' जैसी भावना रची-बसी हो, वह सिन्दूर और बिंदी जैसी सुरक्षात्मक प्रतीक को बचाए रखने के लिए चुप हो जाती है। कहीं आर्थिक गुलामी के कारण, कहीं पतिव्रत धर्म और कहीं माता-पिता द्वारा पिलाई गई सदाचार की घुटी के कारण तो कभी बच्चों के भविष्य और उनकी मनोभावना के कारण पति से अपने रिश्ते को हँसते या रोते-झींकते, लड़ते-झगड़ते घसीटती जाती है या फिर सिर झुकाकर चुपचाप निभाती है।'[34] लेकिन उषा प्रियंवदा की नायिका समाज की ऐसी बनी बनाई धारणा और सामाजिक जिम्मेदारियों को तार-तार करती हुई नजर आती हैं।

(4) आधुनिक जीवन में अकेलेपन और ऊब की स्थिति

उषा प्रियंवदा की कहानियों में आज के जीवनयापन में आये अकेलेपन और ऊब की स्थिति को भी उजागर किया गया है। आधुनिकता के इस दौर में दुनिया जैसे-जैसे सिमटती जा रही है लोगों के बीच दूरियां वैसे-वैसे बढ़ती जा रही है। इस भीड़-भाड़ भरी जिंदगी में भी अकेला हो जाना आज के मनुष्य की नियति हो गई है। एक तरह से यह भी कहा जा सकता है कि अकेलापन भीड़ की संस्कृति की ही देन है। आज की भारतीय स्त्रियाँ प्राचीन भारतीय स्त्रियों की भाति त्याग और तपस्या में अपना जीवन व्यतीत न कर व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सर्वाधिक आकांक्षा रखती है। क्योंकि आज समाज में 'विवाह के प्रति भावात्मक लगाव और ललक' भरी दृष्टि धीरे-धीरे कम हो गई है। वैवाहिक जीवन के प्रति उत्सुकता और उसके पुरातन आग्रह की जगह समाज में विशेष तौर पर महानगरीय जीवन में एक उदासीनता का रवैया और कहीं-कहीं अरूचि तक देखने को मिलती है। ऐसे लोगों की संख्या बढ़ रही है जो विवाह को प्रेम का आधार नहीं, बल्कि जीवन के लिए बेडी मानने लगे हैं।'[35] उषा प्रियंवदा ने समाज की ऐसी स्त्रियों की स्थिति को अपनी कहानियों में उजागर किया है। जैसे- छुट्टी का दिन' कहानी की नायिका माया अपने जीवन में बहुत अकेलापन महसूस करती है उसके लिए छुटी का एक दिन भी बिताना मुश्किल हो जाता है। कहानी की गौण पात्र के रूप में चौती की भूमिका माया की माँ जैसी है। माया की नौकरानी होने पर भी चौती का सम्बन्ध माया से रिश्तों में अपनापन लिए हुए है। लेकिन आधुनिक स्त्री माया की विडम्बना यह है कि उसे न घर में चौन मिलता है और न ही बाहर। हर जगह उसे एक तरह की ऊब और अकेलापन महसूस होता है। इसी तरह पूर्ति कहानी की नायिका 'तारा' और दो अँधेरे- कहानी की 'सुमित्र' भी स्वतंत्र रूप से अर्थोपार्जन करके यह समझती हैं कि अब उन्हें किसी पुरुष के आश्रय की या परिवार की आवश्यकता नहीं है। लेकिन कुछ ही दिनों में वह ऊबकर अकेला महसूस करने लगती हैं। समाज में स्त्री हो या पुरूष दोनों के योग से ही दोनों का विकास संभव है। किसी के द्वारा किसी एक को नकारकर जीवन में सुख को प्राप्त नहीं किया जा सकता है। आधुनिकता के इस दौर में स्त्री हो या पुरूष दोनों को एक-दूसरे को समझने और स्वीकारने की जरूरत है। जिससे दोनों का विकास संभव होगा।

सम्बन्ध

कहानी में सर्जन श्यामला से प्रेम करते हैं। वह शादी-शुदा होने पर भी श्यामला से सम्बन्ध ही नहीं बनाते बल्कि वह अपने परिवार को छोड़कर श्यामला से शादी करने की भी बात करते हैं। लेकिन श्यामला बन्धन-मुक्त जीवनयापन करने में विश्वास करती है जिस कारण वह सर्जन को शादी करने से मना कर देती है। दूसरी तरफ चाँद चलता रहा- कहानी की नायिका रोहिनी, नींद- कहानी की नायिका, सागर पार का संगीत की देवयानी ये ऐसी यौन-स्वेच्छाचारिणी नायिकाएं हैं जो आधुनिक परिवेश में पूर्ण स्वतन्त्र होने का दावा करती है। लेकिन स्वयं के आधुनिक और पारम्परिक द्वन्द्व से ग्रसित होने के कारण इन्हें कहीं भी चौन नहीं मिल पाता है। जीवन में किसी प्रकार की स्वतंत्रता का मतलब स्वच्छन्दता नहीं होती है। अगर हम किसी तरह की स्वतंत्रता चाहते हैं तो इसका मतलब यह बिलकुल नहीं है कि हम जो चाहे वो कर सकते हैं, चाहे उसका परिणाम गलत ही क्यों न हो?

उषा प्रियंवदा की कहानियों में आधुनिक स्त्री की बदलती छवि को चित्रित किया गया है। अधिकाश: स्त्रियाँ अपने आतंरिक द्वन्द्व और आधुनिकता की चकमक के कारण सही निर्णय नहीं ले पा रही हैं, जिसकी वजह से वह निराशा, ऊब और अकेलेपन जैसी आधुनिक बीमारियों की शिकार हो रही हैं। इस प्रकार आधुनिक समाज की यह सबसे बड़ी विडम्बना है। जिसकी तरफ उषा प्रियंवदा आधुनिक पीढ़ी का ध्यान आकर्षित कर, समाज में बदलती स्त्री की आधुनिक छवि को उजागर करती हैं।

(5) यौन-सम्बन्ध और यौन-शुचिता का प्रश्न

उषा प्रियंवदा की कहानियों में यौन-सम्बन्धों और यौन-शुचिता के प्रश्न को लेकर समाज में व्याप्त लोगों की मानसिकता को उजागर किया गया है। गैर यौन-सम्बन्ध या शादी के पूर्व यौन-सम्बन्धों की शुचिता और स्त्री-शोषण के प्रति समाज में व्याप्त परंपरावादी मानसिकता के साथ-साथ क्रमश: यौन-सम्बन्धों और यौन-शुचिता के प्रश्नों को लेकर समाज में आ रहे बदलाव और बदल रही लोगों की मानसिकता का सहज चित्रण किया है। इस बदलते आधुनिक समय और समाज में स्त्री की छवि विविध रूपों में चित्रित हुई है। आज बदलते समय और समाज में ''औरत की समस्या आर्थिक तो है ही पर वह आर्थिक से भी अधिक सामाजिक है- सामाजिक में भी विशेष रूप से यौनपरक है। यौन पक्ष औरत की जितनी बड़ी ताकत है, उतनी ही बड़ी उसकी कमजोरी भी है।'[36] समाज में चली आ रही पुरूष सत्ता के वर्चस्व के कारण 'प्रश्न और उत्तर' कहानी की रज्जो घर में नौकरानी का काम करती है। वह वे-वजह अपने मालिक के हवस का शिकार बनती है। समाज की संकुचित मानसिकता की वजह से वह कुछ बोल भी नहीं पाती है। समाज में ऐसी बहुत सी कामकाजी लड़कियां हैं, वह आज भी वे-वजह अपने मालिक के हवस का शिकार हो रही हैं। लेकिन संकोच या डर या किसी अन्य वजह से विरोध भी नहीं कर पाती हैं। जिस कारण वह आये दिन यौन-शोषण की शिकार हो रही हैं।

आज समाज में 'आधुनिक प्रभाव ने मनुष्य के यौन-सम्बन्धी दृष्टिकोण में भी व्यापक परिवर्तन ला दिया है।

यौन नैतिकता अब सेक्स की स्वाभाविक माँग में परिवर्तित हो गई है क्योंकि आधुनिक युग की आत्मनिर्भर नारी प्रेम को किसी आदर्श या पवित्रता के बंधन में बंधकर नहीं देखती। उषा प्रियंवदा की कहानियों के प्राय: सभी नगरीय पात्र सामाजिक मर्यादाओं से विद्रोह करते हुए जिंदगी को अपनी संपूर्णता में स्वच्छंद रूप से जीने को लालायित नजर आते हैं।'[37]

चाँद चलता रहा

कहानी की नायिका रोहिनी पूरी तरह से परम्परावादी मूल्यों से जकड़ी स्त्री होती है। लेकिन अचानक प्रेमी की मृत्यु हो जाने के बाद वह परंपरा को तोड़ती हैं। परम्परा की वजह से उठने वाली टीस को उसके चरित्र में देखा जा सकता है। रोहिनी समाज में बनी बनाई यौन-शुचिता के पारम्परिक मूल्यों को चुनौती देती हुई अनेक पुरूषों के साथ यौन-सम्बन्ध स्थापित करती है। समाज में आज- ''औरत झूकती भी है' लुटती भी है पर वह- अपने ध्येय की प्राप्ति के लिए संकल्पित है। वह आगे बढ़ती है- कुंठाओं, हीन-भावनाओं से लड़ती-भिड़ती। अब वह देवी सीता या सावित्री- सी अनुगामिनी नहीं- वह आज की जूझती हुई औरत है।'[38] इसी तरह सागर पार का संगीत- कहानी में देवयानी विदेशी पुरूष से शादी करने के बाद विदेशी परिवेश को तो स्वीकार कर लेती है लेकिन अपने संस्कारों और भारतीय परंपरा को भूल नहीं पाती है। जिस कारण वह आधुनिकता और परंपरा के द्वन्द्व से ग्रसित होकर कुंठा की शिकार होती चली जाती है। वह खुद समझ नहीं पाती है कि ऐसा क्यों हो रहा है? इस प्रकार अंत में वह अपने सारे परम्परावादी बन्धनों को तोड़ती हुई, यास्पर नामक युवक के साथ यौन-सम्बन्ध बनाती है। ऐसा करने के बाद वह अपनी कुंठा और बेचौनी से मुक्त हो जाती है।

टूटे हुए

कहानी की टीटी जो पति के होते हुए भी 'नार्मल' पुत्र की चाह में अनेक पुरूषों के संपर्क में आती है। सम्बन्ध- कहानी की श्यामला जो पुरूष से प्रेम करती है, यौन-सम्बन्ध भी बनाती है लेकिन उसके प्रेम में बंधना नहीं चाहती। वह बन्धन मुक्त जीवनयापन करने में विश्वास करती है। उसके लिए यौन-सम्बन्ध स्थापित करना कोई बड़ी बात नहीं होती बल्कि किसी से संबंध बनाना उसके लिए एक सहज और स्वाभाविक प्रक्रिया मात्र है। यौन-शुचिता के प्रश्न से भी उसे कोई मतलब नहीं रहा है।

ट्रिप

कहानी में पति-पत्नी के बीच मधुर प्रेम-सम्बन्धों की पूर्ति हो जाने के बाद, दोनों एक-दूसरे से ऊब जाते हैं। पति नशीले पदार्थ के सेवन में लग जाता है और पत्नी अपने अलग सुख की कामना में स्टीफन नाम के व्यक्ति के संपर्क में आती है। जिस बात से उसे या उसके पति को कोई आपत्ति नहीं होती है।

पुनरावृति

कहानी में प्रो. चिरंतन के अन्दर रिसर्च करने वाली छात्राएँ उनसे स्वतंत्र रूप से यौन-सम्बंध बनाती है। इतना ही नहीं वह अपने पति के बारे में कहती हैं कि 'काश वे तुमसे प्यार करना सीख पाते।' इस प्रकार हम देखते हैं कि उषा प्रियंवदा की कहानियों में बदलते समय और समाज में परंपरा और आधुनिकता के बीच जूझती हुई स्त्री की छवि में काफी बदलाव हुआ है। इतना ही नहीं स्त्रियाँ अपने यौन-सम्बधों को लेकर स्वतंत्र भी हुई हैं। अतरू यह कहना गलत न होगा कि आज के युग में जब तक स्त्री की पवित्रता उसके यौन अंगों के सन्दर्भ में देखी जायेगी तब तक न स्त्री की दशा में सुधार हो सकता है और न ही समाज का विकास। इसलिए आज समाज और परिवार को इस प्रकार के प्रश्न से ऊपर उठकर स्त्री को समझने और स्वीकारने की जरूरत है।

(6) आर्थिक समस्या : धानोपार्जन के केंद्र में बदलाव की स्थिति

'बढ़ती महगाई, बढ़ते जीवन-स्तर और परिवार की उपभोक्तावादी आकांक्षाओं ने महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनने में मदद की। आर्थिक स्वतन्त्रता ने स्त्री की मानसिक बुनावट और विचारधारा को बदला है। उसने कामकाजी औरत की नई भूमिकाओं में अपने सामर्थ्य और कौशल का सिक्का जमायाय लेकिन यह कामकाजी औरत घर और बाहर के कामों के दोहरे दायित्व-बोझ से बोझिल भी हुई। दोनों जगहों पर अपने संघर्ष की प्रक्रिया में उसे शारीरिक और संवेदनात्मक स्तर पर अनेक तनाव झेलने पड़े हैं।'[39] आजादी के बाद व्यक्ति आर्थिक विषमता से दिन-प्रतिदिन टूटता ही जा रहा था। बेकारी को झेलते हुए नवयुवकों की समस्या और भी बढ़ती जा रही थी। ऐसे समाज में स्त्री-शिक्षा और उनके आर्थिक निर्भर होने का भी प्रश्न उठने लगा। जिस कारण स्त्री को भी आगे बढ़ने और आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर बनने का मौका मिला। धानोपार्जन के केंद्र में जहाँ पुरूष वर्ग का ही वर्चस्व था, स्त्री को यह अधिकार नहीं दिया गया था कि वह घर से बाहर जाकर धनोपार्जन कर आत्मनिर्भर बन सके। भारतीय समाज में स्त्री की कमाई से जीवनयापन करना समाज में अपनी तौहीन समझा जाता रहा है। आधुनिकता ने इस 'मिथक' को तोड़ा है। जिस कारण आज परम्परावादी समाज में स्त्री की भूमिका और उसके योगदान को भी समझा जाने लगा है। उषा प्रियंवदा की कहानी 'जिंदगी और गुलाब के फूल' में ऐसे आर्थिक विषमताओं से खण्डित हो रहे मूल्यों और बदलती मानसिकता की स्पष्ट झांकी प्रस्तुत होती हैं। कहानी का नायक 'सुबोध' बेरोजगार है और उसकी बहन वृंदा नौकरी करके घर का पूरा खर्च संभालती है। भाई सुबोध के अन्दर जो कुंठा है वह

बेरोजगारी की वजह से है या प्रेमिका के छूट जाने की वजह से या फिर बहन 'वृंदा' की वजह से लेखिका ने स्पष्ट तो नही किया है। लेकिन लेखिका ने जितनी बारीकी से एक-एक स्थितियों का सूक्ष्मता से वर्णन किया है, उससे यह पता चलता है कि उसे खीझ इस बात से है कि घर और परिवार में जिन चीजों पर अभी तक सुबोध का साम्राज्य था, यानी पुरुषवर्ग का वर्चस्व था, उन सभी चीजों पर धीरे-धीरे बहन वृंदा यानी स्त्री का अधिकार होता जा रहा था। सुबोध पूरे पुरुषवर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। बहन वृंदा यानी समाज में स्त्री का आगे बढ़ना उसके लिए किसी अप्रत्याशित घटना से कम न था। समाज में बदलती स्त्री की छवि को देखकर पुरुषवर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाला सुबोध आवाक् है। सुबोध को अपनी नौकरी और प्रेमिका के जाने के गम के साथ-साथ बहन वृंदा की बराबरी से जलन ज्यादा हो रही थी। क्योंकि वृंदा अब तक चुपचाप रहकर केवल भाई सुबोध के आदेशों का पालन किया करती थी लेकिन वह अब बोलने लगी है। अर्थात समाज में अब तक स्त्रियाँ चुप रहकर सब कुछ सहन करते हुए अपना जीवन समाप्त कर देती थी लेकिन आज स्त्रियाँ पुरुष मानसिकता के विरुद्ध आवाज उठा रही हैं। कहानी में पुरुषवर्ग की खींझ सुबोध के माध्यम से उजागर हुई है।

यह कहानी केवल भाई-बहन के बीच की नहीं है बल्कि यह कहानी समाज में व्याप्त पूरे स्त्री-पुरुष संबंधों के साथ-साथ समाज में उसके अस्तित्व और अस्मिता के प्रश्न को उजागर करती है। सुबोध की समस्या, उसके मन की कुंठा और बेचैनी केवल सुबोध की नहीं है बल्कि समाज के पूरे पुरुषवर्ग की है। पूरी तरह से परम्परा में जकड़ी 'वृंदा' जब आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होती है तब वह घर और परिवार के साथ-साथ स्वयं के अधिकारों के लिए भी आवाज उठाती है।

पैरेम्बुलेटर

कहानी में निम्न मध्यवर्गीय समाज की दशा का चित्रण हुआ है। जिसमें गरीबी, बेरोजगारी और दमित इच्छाओं का सजीव चित्रण किया गया है। जैसे- 'खड़े क्या हो? गाड़ी लेकर जाओ और कहीं बेचकर दवा ले आओं- और आँख पर आंचल रख लिया।'[40] कहानी के प्रत्येक पात्र बोलते रहते हैं। लेकिन कहानी में एक स्त्री द्वारा पुरुष के सामने ऊँची आवाज में बात करना आधुनिकता की पहली सीढ़ी है। जिसके लिए नायिका संघर्ष करती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि मनुष्य के जीवन में आने वाली समस्याओं में से एक समस्या आर्थिक विषमता की भी है। जिसकी वजह से समाज और परिवार में कई तरह की दिक्कतों का सामना करना पड़ता है।

(7) बाह्य आधुनिकता : भीतर पारंपारिकता

भारतीय समाज में पुरानी पीढ़ी के जो लोग आज तक परंपरावादी विचारधारा के अनुयायी रहे हैं वे लोग आज आधुनिकता का समर्थन जरूर करते हैं लेकिन आज भी वे लोग अन्दर से रूढ़िवादी मानसिकता और अपनी परंपरावादी विचारधारा को छोड़कर आगे नहीं बढ़ पा रहे हैं। आज का मनुष्य आधुनिक चेतना और खुले विचारों में खुद बहना चाहता है लेकिन वह नहीं चाहता कि उसके घर की स्त्रियाँ भी ऐसा करे। इसलिए वह स्त्री के बाह्य आधुनिक छवि को तो कुछ हद तक तो स्वीकार कर लेता हैं लेकिन वह हमेशा यही चाहता है कि उसके घर की स्त्री बाहर से आधुनिक भले हो या दिखे, लेकिन अंदर से परम्परावादी और पुरुषों के अनुकूल ही होनी चाहिए। जिससे उनका वर्चस्व हमेशा बना रहे।

आधा शहर

कहानी की नायिका 'इला' के बारे में विदेश में रहने वाले भारतीयों के विचार आज भी पुराने जमाने के लोगों जैसे ही हैं। उषा प्रियंवदा ने भी लिखा है कि आज भी विदेश (अमेरिका) में स्त्रियों की स्थिति ठीक नहीं है। वैसे देखा जाय तो स्त्रियों की स्थिति आज भी वह भारत हो या अमेरिका दोनों देशों में ज्यादा अच्छी नहीं हैं। कहानी की नायिका इला का कसूर यह है कि उसके पति की मृत्यु हो गई और प्रेमी ने किसी कारण बस उसे छोड़ दिया है। इला जैसी पढ़ी-लिखी, सक्षम और योग्य लड़की होने पर भी समाज के लोग उसे चौन से जीने नहीं देते है। उसके साथ ऐसा वे लोग करते हैं जो स्वयं आधुनिकता और परम्परा के मूल्यों बीच त्रिशंकू बने हुए हैं। जिन्हें खुद पता नहीं है कि उन्हें किधर जाना है। ऐसे समाज में इला पुरुषवादी मानसिकता को चुनौती देती हुई कहती है- 'एक पुरूष पचास स्त्रियों से प्रेम करता फिरता है, उसे तुम्हारा समाज कुछ नहीं कहता? एक स्त्री अगर अकेली, सम्मान से जीना चाहती है तो उसके चारों तरफ गिद्ध नोच खाने को तैयार हैं।'[41] भारतीय पुरुष जोकि वहां के इंटरव्यू कमेटी के मेंबर होते हैं, वह इला की नौकरी पाने में मदद करना चाहते हैं लेकिन उनके मन में भी शंका होती है कि कहीं वह इला की वजह से बदनाम न हो जाये। जबकि वह इला के बारे में अच्छी तरह जानता है कि वह गलत स्त्री नहीं है।

भारतीय स्त्रियाँ जो कि अमेरिका में रह रही हैं, उनमें से कुछ स्त्रियों की मानसिकता आज भी स्त्रियों के सम्बन्ध में दोयम दर्जे की ही है। एक प्रसंग आता है कृ जब 'शोभा' राघव की पत्नी और अन्य स्त्रियाँ इकठ्ठा होकर इला और उसकी माँ की बुराई करती हैं तो मीनाक्षी कहती है कि 'बचपन में गलती हो ही जाती है। मालूम नहीं उसकी 'लाइफ' कितनी दुरूखी रही होगी। माँ की बदचलनी का मतलब तो यह नहीं कि लड़की भी वैसी ही निकल'[42] आगे वह कहती है कि- 'शुभा की गाड़ी में लदकर हम चारों डाक बंगले में नहीं जाते थे? जिन्हें हम रविवारीय पिकनिकें

कहते थे। वह आवारापन नहीं था? अगर तुम्हारी मुझसे और शुभा की राघव से शादी न हुई होती तो हमें दुनिया बदचलन नहीं कहती? इला का दोस्त अपने माँ-बाप से डर गया यही न, उसने इला को छोड़ दिया, उसमे इला का क्या दोष?'[43]

चांदनी में बर्फ पर

कहानी में हेमंत नाम का भारतीय युवक अपनी भारतीय प्रेमिका को छोड़ देता है और विदेश जाने के स्वार्थ बस मेरी नाम की विदेशी छात्र से प्रेम और फिर शादी करके विदेश में रहने लगता है। वह विदेशी परिवेश में कभी भी अपने आपको भारतीय कहलाना या दिखना पसंद नहीं करता है, और न ही किसी भारतीय कार्यक्रम में जाना पसंद करता है। लेकिन जब उसकी विदेशी पत्नी मेरी अपने दोस्तों के साथ चांदनी रात में बर्फ पर 'स्केटिंग' के लिए जाती है तो हेमंत को बहुत बुरा लगता है लेकिन वह चाहकर भी उसे रोक नहीं पाता। हेमंत पूरी तरह से आधुनिक होते हुए भी अपने अन्दर से भारतीय संस्कृति और परम्परा को मिटा नहीं पाता। जिस कारण विदेशी पत्नी से भी भारतीय पत्नी की तरह पतिव्रता रहने की उम्मीद करता है। जबकि वह जानता है कि विदेशी परिवेश में पतिव्रता या स्त्री-पवित्रता नाम की कोई चीज नहीं होती है, जैसा की भारत में है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि समाज में स्त्रियों के चरित्र और उसके व्यवहार को लेकर स्त्री का स्त्री के प्रति और पुरूष का स्त्री के प्रति नजरिया बहुत ही निम्नकोटि का रहा है। वे आज भी बाहर से आधुनिक और भीतर से पूरी तरह से परम्परावादी विचारधारा का लिबास ओढ़े हुए हैं।

उषा प्रियंवदा की शुरूआती दौर की कहानियां पूरी तरह से आदर्शवादी और परम्परावादी हैं लेकिन समय के साथ-साथ इनकी कहानियों में विकास हुआ है। शुरूआती दौर की कहानियों में स्त्री पात्र परम्परा का विरोध करती हुई बहुत कम नजर आती हैं। इस कारण स्त्री पात्र सामाजिक व्यवस्था को अपनी नियति मानकर स्वीकार करती रहती है। लेकिन अंतिम तीन कहानी-संग्रहों में स्त्रियाँ समाज में चली आ रही भारतीय परम्परा और संस्कृति का विरोध करती हैं। इतना ही नहीं अपने हक और अस्तित्व की पहचान के लिए आवाज भी उठाती हैं। उषा प्रियंवदा की सम्पूर्ण कहानियों में स्त्री-पुरूष संबंधों में आये बदलाव को चित्रित किया गया है। जिसमें स्त्री पात्रें के आंतरिक द्वंद्व को पकड़ने की सहज और सूक्ष्म कोशिश की गई है। बदलते समय और समाज में आ रहे बदलाव और संबंधों के विविध स्तरों पर स्त्री की छवि को इंगित करने की कोशिश की गई है। कहानी में स्त्री पात्र मुख्य रूप से सामने आती हैं, पुरुष पात्रों की उपस्थिति गौण है। पुरुष पात्र मात्र सहायक रुप में या कहानी को गति देने के लिए आते हैं। कहानी में स्त्री पात्रें का अपने पुरानी परम्परा के प्रति मोह छूटता जा रहा है लेकिन उसके मन में त्याग, बलिदान, मूक प्रेम जैसी सहज और उच्चकोटि की भावनाओं में कोई परिवर्तन दिखाई नहीं देता है।

आधुनिक स्त्री की अपनी सोच है। जिसके सामने तमाम तरह की नैतिकता-अनैतिकता, जैसे संस्कार मिट चुके हैं। भारतीय स्त्रियाँ विदेशी परिवेश में रहने के कारण वहां के विदेशी प्रभावों से आक्रांत हुई हैं। भारतीय स्त्रियाँ भले ही विदेश में रह रही हो लेकिन स्वयं को पूरी तरह से भारतीयता से अलग नहीं कर पाती हैं। उषा प्रियंवदा का पहला कहानी- संग्रह 'फिर बसंत आया' को नई पीढ़ी के वैयक्तिक द्वंद्व का दस्तावेज कहा जा सकता है। जिसमें समाज की विभिन्न स्थितियों की झलक देखने को मिलती है। 'प्रेम' कहानी का मुख्य विषय रहा है। जिसके अवरोधक के रुप में तमाम पारिवारिक, सामाजिक जिम्मेदारियों के साथ-साथ सामाजिक कठिनाइयां- जैसे दहेज आदि समस्याओं को उजागर करते हुए प्रेम-सम्बन्धों की असफलता और अंत में पुनर्मिलन को विषय बनाया गया है। इन कहानियों में स्त्रियाँ अपने स्वतंत्र अस्तित्व के लिए अपने आतंरिक द्वंद्वों के बीच बेबस हो अंर्तविरोधों को महसूस तो करती हैं लेकिन सामाजिक मान-मर्यादाओं की वजह से कुछ कर नहीं पाती हैं। दूसरा कहानी-संग्रह 'जिंदगी और गुलाब के फूल' में शहरी परिवेश में बदल रहे जीवनयापन के मूल्यों को विषय बनाया गया है। इस वजह से सम्बन्धों में विविध स्तरों पर आये बदलाव को यथार्थ के धारातल पर उजागर किया गया है। अन्य कहानी संग्रहों में 'एक कोई दूसरा' और 'कितना बड़ा झूठ' में परम्परा और पाश्चात्य मूल्यों के बीच जूझती स्त्री के आतंरिक द्वंद्व की प्रत्येक 'स्थितियों' को पकड़ने की कोशिश की गई है। इतना ही नहीं आधुनिक और पारम्परिक मूल्यों के बीच जूझती आधुनिक स्त्री की बेचौनी को भी बहुत सहजता से उजागर किया है। कुँवरनारायण के शब्दों में- इनकी 'कहानियों में तमाम रूढ़ि-परिस्थितियों और घटनाओं से गुजरते हुए भी वे अपने को रूढ़ि-निष्कार्षों से बचाती हैं रू मानो जीना ही नहीं, समझदारी से जीना ज्यादा जरूरी है। किसी भी स्तर पर जीते हुए वे विवेक की तरुदार हैं, मानो लेखिका इस तथ्य के प्रति बराबर सचेत है कि विकासशील जीवनमूल्य मनुष्य की इच्छा-क्षमता से अधिक उसकी चिन्तन-क्षमता पर निर्भर करते हैं।'[44]

इस प्रकार उषा प्रियंवदा अपने जीवन में शुरू से अंत तक और आज भी अपने लेखन के दौरान स्त्री जीवन और उसकी समस्या को लेकर बहुत ही संवेदनशील हैं। इनकी कहानियों में अपनी परंपरा से जूझती भारतीय परिवेश में भारतीय स्त्री और विदेश परिवेश में निवास करने वाली भारतीय स्त्रियों के परिपेक्ष्य में पारम्परिक मूल्यों के टूटने और आधुनिक मूल्यों के दबाव से उत्पन्न स्त्री-संघर्ष की झाँकी प्रस्तुत होती हैं।

सन्दर्भ-सूचीः-

(1) संपादक कृमुकुंद द्विवेदी रू हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली भाग (5), राजकमल प्रकाशन नई-दिल्ली-110002, तीसरा संस्करण-2007, पृष्ठ-23

(2) बच्चन सिंह- आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द, वाणी प्रकाशन नई-दिल्ली-110002, संशोधित संस्करण-2010,पृष्ठ-63

(3) संपादक- मुकुंद द्विवेदी : हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावलीभाग (9) राजकमल प्रकाशन नई-दिल्ली-110002, तीसरा संस्करण-2007,पृष्ठ-358

(4) वही पृष्ठ-358

(5) वही पृष्ठ-362

(6) वही पृष्ठ-18

(7) (http://saahityaalochan-blogspot-in/2009/05/ blog&post_27-html)

(8) संपादक ख्रमुकुंद द्विवेदी- हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली भाग (9) राजकमल प्रकाशन नई-दिल्ली-110002,तीसरा संस्करण-2007, पृष्ठ-362

(9) आलोचना पत्रिकाः त्रैमासिक(51अंक) (अक्टूबर-दिसंबर) पृष्ठ-31

(10) नामवर सिंह- दूसरी परम्परा की खोज, राजकमल प्रकाशन नई-दिल्ली-110002, संस्करण -2011,पृष्ठ-17

(11) सुरेन्द्र चौधारी (संपादक-उदयशंकर)- इतिहास संयोग और सार्थकता, अंतिका प्रकाशन पहला संस्करण-2009पृष्ठ-43

(12) सम्पादक रू राजकिशोर- आज के प्रश्न रू स्त्री, परम्परा और आधुनिकता पृष्ठ-48

(13) वही पृष्ठ-40

(14) चित्र मुद्गल- तहखानों में बंद अक्स,कल्याणी शिक्षा परिषद,नई-दिल्ली-110002, संस्करण-2012, पृष्ठ-10

(15) सम्पादकः राजकिशोर- आज के प्रश्न : स्त्री,परम्परा और आधुनिकता पृष्ठ-46

(16) राजेंद्र यादव (सं.अर्चना वर्मा) : अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य, राजकमल प्रकाशन नई-दिल्ली-110002, आवृति-2011, पृष्ठ-25

(17) कुमुद शर्मा- आधी दुनिया का सच, सामयिक प्रकाशन,नई-दिल्ली-110002, प्रथम संस्करण- 2011, पृष्ठ-45

(18) उषा प्रियंवदा रू सम्पूर्ण कहानियां, राजकमल प्रकाशन,नई-दिल्ली-110002, संस्करण-2007पृष्ठ- 324

(19) वही पृष्ठ- 328

(20) वही पृष्ठ-344

(21) अभय कुमार दूबे ख्र पितृसत्ता के नये रूप- हंस मार्च 2001 पृष्ठ-139

(22) रमणिका गुप्ता रू पातीयां प्रेम की, समीक्षा पब्लिकेशन, दिल्ली-110031 संस्करण-2007, पृष्ठ-78

(23) उषा प्रियंवदा रू सम्पूर्ण कहानियां, राजकमल प्रकाशन,नई-दिल्ली-110002, संस्करण-2007, पृष्ठ- 109

(24) वही पृष्ठ- 116

(25) वही पृष्ठ-167

(26) वही पृष्ठ-168

(27) वही पृष्ठ-155

(28) डॉ0 कु प्रेमपाल : नई कहानी में वैयक्तिक - चेतना, चानना प्रेस 13, एम.एम.रोड, नई दिल्ली, पृष्ठ-134

(29) उषा प्रियंवदा रू सम्पूर्ण कहानियां, राजकमल प्रकाशन, नई-दिल्ली-110002, संस्करण-2007, पृष्ठ-148

(30) वही पृष्ठ-144

(31) वही पृष्ठ-148

(32) नामवर सिंह : कहानी : नयी कहानी, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद संस्करण -2012,पृष्ठ-143

(33) उषा प्रियंवदा रू सम्पूर्ण कहानियां, पृष्ठ-229

(34) कुमुद शर्मा- आधी दुनिया का सच, पृष्ठ- 49

(35) वही पृष्ठ-53

(36) रमणिका गुप्ता रू स्त्री विमर्श (कलम और कुदाल के बहाने) पृष्ठ-110

(37) प्रस्तुतकर्ता शिवांग कुमार भावसार पर 9:32am http://shivangbhavsar blogspot-in/2010/12/blog&post-html½

(38) रमणिका गुप्ता- स्त्री विमर्श 'कलम और कुदाल केबहानेपृष्ठ-110

(39) कुमुद शर्मा- आधी दुनिया का सच, पृष्ठ- 61

(40) उषा प्रियंवदा : सम्पूर्ण कहानिया, राजकमल प्रकाशन, नई-दिल्ली-110002, संस्करण-2007 पृष्ठ-203

(41) वही पृष्ठ-450

(42) वही पृष्ठ-453

(43) वही पृष्ठ-453

(44) देवीशंकर अवस्थी-विवेक के रंग, वाणी प्रकाशन नई-दिल्ली-110002, संस्करण-1995, पृष्ठ सं.260

◆◆◆